आलोक कुमार चक्रवाल

कुलपति
गुरु घासीदास विश्वविद्यालय
बिलासपुर, छत्तीसगढ़

प्रोफेसर आलोक कुमार चक्रवाल की कविताओं में स्मृतियों का एक भरा पूरा संसार है। जिनमें ऐसे अनेक ऐसी आत्मीय और मनोरम छवियाँ गाहे-ब-गाहे अक्सर कौंध जाया करती हैं। दरअसल भौतिक दृष्टि से आज के संपन्न जीवन में इन स्मृतियों के नामो निशान या तो मिटते जा रहे हैं या मिट चुके हैं। वे स्मृतियां अपने आप में एक बड़ी और भावपूर्ण कविता की संभावना हैं। इन स्मृतियों में बचपन के वे दिन हैं जब माँ रोटी पर सरसों के तेल और नमक का एक हल्का मिश्रण लेप कर दे दिया करती थी। आज हमारे घरों में इसकी न तो कोई परिकल्पना रह गई है न संभावना। लेकिन जो इससे गुजर चुके हैं उनके लिए वह भूख के किसी आदिम आस्वाद की तरह स्मरण मात्र से ही घुलने लगता है।

वैसे ही हमारे आसपास गिलहरियों का होना था। दरवाजे के सामने खड़े नीम के पेड़ से लेकर धान फटकती हमारे माँ के आंचल और सूप तक इन गिलहरियों की नटखट चहल पहल हमेशा बनी रहती थीं। ये कविताएं ऐसी अनेकानेक स्मृतियों की छंद हैं जो अपनी सहज अभिव्यक्ति के कारण आपको अपने साथ बहा ले जाएंगी। स्मृति भ्रंश की अवस्था दुनिया के किसी भी देश, किसी भी समाज को समृद्धि के बर्बर रास्ते पर ले जाता है। किसी भी समाज की यह एक रुग्ण और दारुण दशा है। कविताएं इस ओर बहुत शिद्दत से इशारा करती हैं। इस अंक में प्रकाशित आलोक कुमार चक्रवाल जी की यह लंबी कविता और साथ ही कुछ कविताएं जो भले छोटी हों लेकिन इनकी अर्थछवि बहुत दूर तक दिखाई देती है। स्वनिम के चौथे अंक में हम इन कविताओं को विशेष रूप से प्रकाशित कर रहे हैं।

- गौरी त्रिपाठी

मन

मन ही मन में मन खिलता है,
मन में एक मंदिर मिलता है ।

मन को मान के मन का मीत,
मन से मन दिखलाता प्रीत।

मन की बात मैं कैसे बताऊं ,
मन का मन मैं किसे दिखाऊँ ?

मन कहता है ठहर जरा तू ,
मन कहता है जरा मचल तू ।

मन में एक फुलवारी खिलती,
मन में एक उजियारी सिमटी।

मन से मन को जोड़ के देखा,
मन से मन को मोड़ के देखा।

मन को मन की बातें कहता,
मन से मन की बातें सुनता।

मन तो है एक बूंद की भाँति,
आज यहां कल वहां पर गिरता ।

मन से मन की राह निकलती,.....

जुबां

जब जुबां साथ ना दे
जब हौसले साथ ना हों
तो- कहां जाएं?
किससे कहें ?
और क्या बताएं ?
जिंदगी रोज नए रंग दिखाती है
हर रंग से एक नया रंग बनाती है
रंग बिरंगी दुनिया बनाकर

बड़ा सताती है
सब लूटते हैं रंगों का मजा बेहिसाब
किसे याद रहता है
जब वक्त मांगता है हिसाब
कुछ खलाएं, कुछ अदाएं और कुछ ख्वाब
सब कुछ मिलता है, जिंदगी के मेले में सुबह शाम
मंजिलें रोज बनाता हूं और फिर निकल जाता हूं
मंदिर की मूरत की तरह रोज मिलता हूं
पर कुछ ना कहता हूं
राज कई हैं फ़ाश किए लोगों ने मुझ पर
पर किसी से कुछ भी ना कहता हूं
लगी है प्यास बड़ी देर से, सो प्यासा हूं
कुछ लोग बढ़ा गए थे मेरी प्यास, सो प्यासा हूं
आज हम नहीं कुछ कह पाएंगे
आज वहीं से हम निकल जाएंगे
आज कुछ बात बन ही जाएगी
आज जज्बात मेरे खुद ही निकल आएंगे
यही राज मेरे लब पे अटका
कोई तो है बात जो मेरे दिल मे खटका।

मन और परिंदा

परिंदों की तरह उड़ता है देखो आज मेरा मन।
बड़ी मुश्किल से निकले हैं यह हालात बिन बंधन॥

मिले हैं लोग अच्छे नाम की खातिर यहां पर सब।
कि सच्चे नाम को आखिर यहां जाना है किसने कब॥

रुकी थी रात लंबी, उनके आने की उम्मीदों पर।
वहीं पर लोग बैठे थे, जहां टूटे थे सब मंजर॥

हमारी बात उनसे हो न पाई ये हकीकत है।
उन्हीं की बात करते हैं जहाँ से, ये हकीकत है॥

अभी उल्फत की बातें छोड़ दो के है यहीं अच्छा।
कभी उलफ़त में जी कर कौन बन पाया नबी सच्चा॥

रजा हो जब तुम्हारी हम भी दुनिया खुल के देखेंगे।
तेरी दुनिया के हर जर्रे को हम भी खुल के देखेंगे॥

तेरी हर बात पे करते हैं बातें रहनुमाई की,
तेरी हर रहनुमाई जिंदगी में जी के देखेंगे।

लगी है आग जब उनके जानिब होके जीने की,
उन्हीं की आग में हम खुद को जलवा करके देखेंगे।

खुली है आंख उनकी आरजू में एक मुद्दत से,
उन्हीं की आरजू में ये बिनाई खो के देखेंगे।

गिलहरी

गिलहरी के मृत बच्चे को
आज बीच रास्ते पर देखा
दिल बैठ सा गया
या फिर दिल में
शायद दिल ही ना रहा
गिलहरी के बच्चों का मरना
ठीक नहीं
ये गिलहरियां हमारे जीवन का आधार
कितने ही नए वृक्ष
इन गिलहरियों के
तराशे गए बीज से निकलते हैं।

समझ की समझ

समझो जब समझ में ना आए
बोलो जब शब्द भी चूक जाए
मत बात करो तुम साहस की
डर से निकलो, सब मिल जाए।

कल रात सुहानी लगती थी
कल निशा दीवानी लगती थी
अब सूरज तड़प के निकला है
क्या उसे पता है, क्या था?

कह लोगे तुम भी सच अब तो
सब भुगत भी लोगे हंस हंस के
जब आग लगी हो जंगल में
दरिया की तलब कहां मिटती।

मैं लिखता हूं कुछ शब्द नए
मैं जीता हूं लम्हेलम्हे
मैं तरस रहा हूं जीवन को
यूं पल छिन जीवन चले गए।

मैं गाता गीत पुराने हूं
मैं शाख से बिछड़ा पंछी हूं
मैं भटक गया हूं इस नभ में
कोई छोर नहीं है जीवन का
कब कहूं मैं बात तुम्हें

कब मिले तुम्हारी रात मुझे
कब व्यक्त करूं मैं अनचाहा
जीवन ने हर पल सिखलाया।

जब बात चली है बातों की
तुम कहते-कहते रुक जाते
मैं सुनते-सुनते खो जाता
यह बात नहीं है औरों की
यह बात तुम्हारी मेरी है।
कोई और यहां पर क्या पाता?

बदलता वक्त

वक्त बदला है
वक्त के साथ सब कुछ बदल रहा है
लोग, लोगों की फितरत
और रवायतें भी

वक्त सब कुछ बदल देता है
तस्वीर और तासीर भी।

वक्त ने बहुत कुछ बदला है
और बदल रहा है
जो नहीं बदला वो वक्त नहीं है
जो बदल गया वो भी वक्त नहीं है

जब सब बदल रहे थे
तब तुम क्यूँ बिन-बदले रह गए
काश के तुम भी बदल जाते
अपनी हकीकत की तरह
तुम्हें भी बदल जाना था।

खयालों और ख्वाबों की
इक दुनिया होती है
ये सिर्फ देखने वाले की
फितरत से बदलती है

वो चाहे तो बदल ले
या फिर ना भी बदले

पर जब सब बदल रहा है
तो ख्वाबों का बदलना भी बनता है

सब जायज है
कुछ भी नाजायज नहीं है

सब बदल जाते हैं
सबकी अपनी वजह होती है
कुछ तो बेवजह ही बदल जाते हैं
फिर तुम क्यूँ?
क्यूं नहीं बदलते तुम

तुम क्या कुछ अलग हो?
क्यूं अलग हो?
अगर हो तो
होना तो यूं चाहिए कि
सबसे पहले तुम बदलो
क्यूँ?
वो यूँ कि तुमने कितने ही बदलाव देखे हैं
फिर भी क्यों नहीं बदलते?

एक बार की बात है
रास्ते में मुझे मौका मिला
और देखते ही देखते वो बदल गया

कल ही की बात है
उनका विश्वास मिला था
फिर यक-ब-यक बदल गया

उनका एहसास भी मिला था
बस वो ना बदला

अब सोचता हूं
जब सब बदल जाता है
तो फिर ये एहसास क्यों नहीं बदलता

क्यूँ मैं एहसास के भरोसे
जिंदगी निकालूं

क्यूँ न ये एहसास भी
हकीकत में बदल जाए
जब सब बदल रहा है
तो सच इसे भी बदलना ही चाहिए

जो दिखता है सच ही लगता है
पर अब तो सच भी बदल जाता है

जो मिलता है सच ही लगता है
पर वो भी बदल जाता है

सब बदल रहा है
आखिर क्यों ?

मेरे मन में कई प्रश्न
चल रहे हैं
बदल-बदल कर
कई बार तो पुराने प्रश्न भी
बदल जाते हैं

ऐसा नहीं है
कि हर प्रश्न का
उत्तर मिल ही जाता है
कुछ अनुत्तरित भी रह जाते हैं
फिर भी बदल जाते हैं।

लोग जो अपने थे
अपने नहीं रहते
वो जो सपने थे
वो भी नहीं रहते

अब तो ये बड़ा सवाल है
आखिर के क्या रहेगा

कुछ रहेगा भी या नहीं
क्या जीवन इतना अनिश्चित है
कि आप कुछ भी निश्चित ना कर सके

तुम भी बदल जाओगे
फिर मेरा ये वहम भी टूटे
कि कुछ तो है जो नहीं बदलता

जब सब बदल रहे हैं
तुम भी बदल जाओ
और तोड़ दो मेरा ये वहम
के कुछ तो है जो नहीं बदलता।

कल ही एक मासूम के
चेहरे पर मासूमियत दिखी थी
आज देखा तो वो भी बदल गई।

मक्कारी एक ऐसा मिजाज है
जो शायद ही कभी बदलता हो
पर यह तो कमाल ही हो गया।

देखते ही देखते वो भी वहशियत में बदल गई
मैं फिर गलत साबित हुआ
वहशियत भी दरिंदगी में बदल गई।

इंसान की इंसानियत बदल रही है
फिर हैवान भी क्यूँ ना बदले।

तरक्की का दौर है
सब तरक्की कर रहे हैं
हर दिन इक नई नस्ल बदल रहे हैं
हर झपकते पलकों में अपने ईमान को बदल रहे हैं।

बस एक तुम हो जो नहीं बदल रहे हो
अब मान भी जाओ और तुम भी बदल जाओ।

कई चीजें जो मैं बदलना चाहता था
पर नहीं बदल सका
मेरी मां के चेहरे की बेबसी
मुझे पालने की लाचारी

परिस्थितियों की दारुणता
कभी नहीं बदली
लोगों का बेगैरत रवैया
धिक्कारती नजरें भी नहीं बदली।

बस एक तुम हो जो नहीं बदलते
हजारों वजहें हैं फिर भी नहीं बदलते
काश के तुम भी बदल जाते।

ताखा

कभी हर घर में एक ताखा हुआ करता था
घरों के नए लिबास में ये ताखा खो गया

आज की नस्ल को तो ताखा शब्द भी शायद विलायती लगे।
लगेगा क्यूँ नहीं लगेगा
जब देखा ही नहीं तो अजनबी तो लगेगा ही।

ताखे का होना हर घर की शान थी
आन और बान भी थी

घर में घुसते ही
बाबूजी की पहली नजर
ताखें पर ही जाती थी
शायद कोई चिट्ठी पत्री आई हो
या फिर कोई संदेशा हो

अक्सर ताखे में घर के किवाड़ की चाबी हुआ करती थी
सुबह उठते और रात को सोते ताखें पर जाना जरूर होता था।

अक्सर घरों में इसी ताखे में ढिबरी भी रखा करते थे
ताखें की दीवार ढिबरी के धुए से काली हो जाती थी
पर करें तो क्या करें
कोई और जगह इतनी महफूज नहीं होती थी
जो ढिबरी को हवाओं के थपेड़े से बचा सके

अगर रोशनी मुतवातर
चाहिए तो ढिबरी का ताखें में होना जरूरी था।

अजब गजब के हुआ करते थे ये ताखे
कहीं चौकोर, तो कहीं सीधे
तो कहीं अल्पनाओं और पच्चीकारी से सजे हुए

हर कोई अपनी सामाजिक और आर्थिक स्टेटस के मुताबिक
अपना ताखा सजाकर रखता था।

ताखा हर किसी की तवज्जो का
मरकज बना रहता था

आज नए जमाने के घरों में ताखे नहीं है
खो गए हैं या विलुप्त हो गए हैं

हर जगह अलग प्रकार के अत्याधुनिक फर्नीचर हैं
आलमारियां है, टेबल है, कुर्सी है, लॉकर है,
बस नहीं है तो एक ताखा नहीं है

बेतहाशा पैसे खर्च होने के बावजूद
आज का इंटीरियर वो तवज्जो नहीं पाता
जो किसी जमाने में ताखे को मिलता था

इक ताखा ही था जिससे
घर के छोटे-बड़े का वास्ता था

यूँ लगता था मानो
ताखे के बिना घर ही अधूरा है

मैं सिर्फ ताखे पर ही क्यूँ अटका हूँ
आज बहुत कुछ है जो बदल गया है
क्यूँ ?
क्योंकि इंसान बदल गया है
इंसानी फितरत बदल गई है
ना जाने किस चीज की चाह में
अपनी खुशियों से हर रोज
इंसान दूर चला जा रहा है

मुझे याद है
घर के बाहर के वो चबूतरे
जिस पर बैठे हम यार दोस्त
घंटों हंसी ठिठोली किया करते

वक्त तो मानव पंख लगाकर उड़ जाता था
इन चबूतरों पर
और घर से कोई ना कोई बुला कर ले जाता था।

हर घर में एक आंगन भी हुआ करता था
जहां बच्चों की किलकारियां हुआ करती थी

घर के सभी अच्छे प्रसंगों में ये आंगन
गूंजता रहता था
महिलाओं का सबसे प्रिय जगह था ये आंगन

घर में बरामदा था, छत थी
और बड़ी-बड़ी खिड़कियां
इंसानी तरक्की ने ये सब बदल दिया

अपना घर पाने के चक्कर में
डिब्बे जैसे दड़बे में हम शिफ्ट हो गए
जहां सांस लेना दूभर है
वहां हम जिंदगी तलाश रहे हैं

घर के बड़े बूढ़ों का साथ
हमें अच्छा नहीं लगता या
घर से निकलकर बेगानों के लिए आ गए
अपने मां-बाप की नजरों से दूर
अंकल, आंटी को हाय-हल्लो करना अच्छा लगता है
आखिर फ्रीडम और स्टेटस का सवाल जो ठहरा

अपने भाई बहनों के साथ
मिलकर रहने में प्राइवेसी जाती थी
इसलिए हम दड़बों में शिफ्ट गए
कमियां फिर भी थी
इसलिए क्लब की मेंबरशिप ले ली
और वीकेंड पर झूठे और सजावटी चेहरे लेकर
बे मतलब के रिश्ते बांधते हैं।

सच

सच ढूंढता हूं मैं
बड़ी शिद्दत से - सच ढूंढता हूं मैं
हर जगह, हर घड़ी, हर पहर
बस सच ढूंढता हूं मैं

कई बार यूं लगा के
आज तो मेरी फतह निश्चित है
कई बार यूं लगा के
आज मिल ही जाएगा
मेरी जिंदगी का मुकाम

जबकि लगा हूं एक ही अंजाम को
फिर भी मेरा मकां नहीं मिलता

कई बार यूं भी होता है
जिसे समझता हूं सच
बस वही निकल जाता है
दिल से बड़े करीब से
जब भी जाके देखता हूं
मेरा सच बदल सा जाता है

सच के इतना करीब पहुंच कर भी
सच क्यूं मुझसे दूर हो जाता है
बस इसी उघड़े हुए को बुनने में लगा हूं
आखिर सच ढूंढता हूं मैं

सब कहते हैं सच आखिर सच होता है
वो आखिरी सच कहां होता है
इस आखिर की हद आखिर कब होगी
कौन से पड़ाव पर यह ठहरेगा
कौन से मुकाम पर यह टिकेगा
कौन सी जुबान से यह निकलेगा

वही सच जिसका हर तरफ बोलबाला है
वही सच जो लफ्फाजियों का निवाला है
बस वही वाला सच जिसका दम भरते लोग नहीं थकते
बस उसी सच को ढूंढता हूं मैं

सच ढूंढता हूं मैं
कभी घर तो कभी चौबारे पर
कभी गली तो कभी चौराहे पर
सच ढूंढता हूं मैं

बड़ी मिन्नतें की है मैंने
बस इक सच के खातिर
सब कहते हैं कि मैंने जो कहा वही सच है
सब अपने सच को बड़ा बताते हैं
सब अपने सच की दुहाई देते हैं
सब कहते हैं उनके सच से
बड़ा कोई दूसरा सच नहीं है

सच का बड़ा ज़माना है
सब सच के मुल्लम्मे में लिपटे हुए है
सभी ने सच की चादर ओढ़ रखी है
किसी-किसी ने ताबीज भी पहनी है सच की

ऐ- खुदा या परवरदिगार
तुमने मेरे साथ ऐसी नाइंसाफी क्यूँ की।
क्यों दी तूने ऐसी बीनाई मुझे कि
सच जो हर तरफ बिखरा पड़ा है
बस एक मुझे ही नहीं दिखाई देता।

फिलहाल मैं ना थकने वाला हूं
ना ही मैं हारने वाला हूं
मैंने भी ठान रखी है
कुछ भी हो जाए सच आखिर ढूंढ ही लूंगा

आज जरूरत पड़ी तो खुदा के घर तक भी
जाकर इसकी पैमाइश कर ही लूंगा
जो बना फिरता है सारे जहाँ का रहनुमा
उसके दर की दहलीज को भी छू लूँगा
बस इक सच की खातिर

मैं भी अपने लगन का पक्का हूं
मैं भी अपने वचन का पक्का हूं
कुछ भी हो जाए अब तो बस ठान ली है
बस अपने ही दिल की बात मान ली है

कुछ भी हो जाए जाए हर हाल में पा लूंगा
कुछ भी हो जाए सच्चाई को छू लूंगा।

सच को ढूंढता हूं मैं
सच को सच में ढूंढता हूं मैं

सच का यो दुर्लभ हो जाना बड़ा बेतुका सा लगता है
सच का यूं खो जाना बड़ा अटपटा सा लगता है
लगता है अगर यही लब्बो लुआब था तो फिर
क्यों लोग दम भरते थे सच का दिन रात।

अगर सच का पाना इतना ही मुश्किल है तो
फिर क्यों सिखाया हमें हर कदम पर के सच के साथ रहो
हमें बचपन से सिखाया गया है सच बोलो
इस सच को सच मानकर मैंने सच बोलना सिखा

मैं एक सच बोलता हूं
बदले में हजार झूठ का नजराना मुझे मिलता है
मैं एक सच देता हूं लोग अनगिनत मक्कारियों से नवाजते हैं मुझे

मैं कोशिश करता हूं कि जो हूं बस वही रहूं
आखिर खुदा के घर जाना है
किस हाल में आया था उसी हाल में जाना है
ना कुछ लेकर आया था और ना ही कुछ लेकर जाना है।

बस यही सोच कर के जो हूं जैसा हूं
बस वैसा ही बना रहूं
बस वैसे ही दिखता रहूं
पर ये क्या ?
लोग तो वैसे नहीं दिखते
ना ही वैसे लगते हैं
आदमी वही होता है पर
फितरत हरबार बदल जाती है
इंसान वही होता है पर
शख्सियत हर बार बदल जाती है
आदम जात वही होता है पर
आदमीयत बदल जाती है

क्यों बदलता रहता है यह इंसान ?
क्यों ऐसी फितरत पाई इंसान ने
इक पल भी टिक के नहीं रहता
बस बदलता जाता है
फितरतें, अंदाज, ईमान
और ना जाने क्या-क्या सब कुछ बदल जाता है
पर मैं भी लगन का पक्का हूं
सच को ढूंढता हूं मैं

सच को ढूंढता हूं मैं
आखिर में अपनी मंजिल हासिल करके ही रहूंगा,
आखिर सच को ढूंढता हूं मैं

देखा था किसी की आंखों में इक बार नूर कोई
फिर क्या था चल पड़ा उसके नूर के पीछे
क्या पता था कि सच के मानिंद नूर का भी
मिलना आसान नहीं है

फिर लगा क्या नूर और सच एक ही है
नूर क्या खुदाई शै है
नूर क्या सच का रास्ता दिखाएगी
कभी नूर कभी सच

सच में में उलझ गया फिर एक बार।
समेटा मैंने अपने आप को
और फिर से लगाया लगन की ताकत को
समझाया खुद को अपने ही अंदाज में
आखिर सच ढूंढता हूं मैं।

जो दिन और दया की बातें करते थे वो भी बदल गए
जो किया करते थे तकरीर इंसाफ ओ दुहाई
की वो भी बदल गए
जो खाते थे कसमें जीने मरने की

बड़ा जोर दिया मैने अपने छोटे से दिमाग पर
क्या यही सच है की सब कुछ बदल जाता है
ईमान धर्म क्या प्यार, मोहब्बत
रिश्ते नाते क्या कुछ भी नहीं टिकता
क्या वक्त के साथ सबकुछ बदल जाता है
ऐसा है तो आखिर मैं क्यूं नहीं बदला
शायद कुछ नुक्स रह गई थी मेरे में
ऊपर वाले की तरफ से
शायद यही वजह है कि
मैं सच ढूंढता हूं
आखिर यही है मेरी फितरत
सच ढूंढता हूं मैं